प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

एकल पीठ: माननीय श्री न्यायमूर्ति प्रशांत कुमार मिश्रा

द्वितीय अपील क्रमांक **206/2006**

अपीलार्थी राजकुमार खुबवानी

बनाम

प्रत्यर्थी श्रीमती राम प्यारी बाई

उपस्थित:-

श्री मनोज परांजपे, अपीलार्थी के लिए अधिवक्ता।

श्री बी.पी. शर्मा, प्रत्यर्थी के लिए अधिवक्ता।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

सिविल प्रक्रिया संहिता, **1908** की धारा **100** के तहत द्वितीय अपील

आदेश

(29 जनवरी, **2010** को पारित)

1. उत्तरवादी/वादीनी श्रीमती राम प्यारी बाई द्वारा अपीलार्थी को वादग्रस्त परिसर से बेदखल करने, उसका खाली कब्ज़ा प्राप्त करने और हर्जाना हेतु दायर किए गए वाद में विचारण न्यायालय में अपीलार्थी राजकुमार खुबवानी प्रतिवादी है।

2. विचारण न्यायालय ने वाद खारिज कर दिया, तथापि, वादीनी/उत्तरवादी द्वारा अपील किए जाने पर, विद्वान प्रथम अपील न्यायालय ने प्रथम अपील स्वीकार किया और वाद को डिक्री कर दिया, जिसमें अपीलार्थी/प्रतिवादी को दो माह के भीतर वादग्रस्त परिसर का खाली कब्ज़ा वादीनी को सौंपने तथा वाद दायर करने की तारीख, अर्थात् 6-2-2003 से लेकर वादीनी को खाली कब्ज़ा दिए जाने की तारीख तक रुपये 450/- प्रति माह की दर से हर्जाना देने का निर्देश दिया है।

3. प्रथम अपीलीय न्यायालय के उक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर, प्रतिवादी/अपीलार्थी द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन यह द्वितीय अपील इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

4. वादीनी/उत्तरवादी का वाद, जैसा कि वादपत्र में अंकित है, यह है कि वादीनी ज़िला रायपुर के गाँव सिलयारी में स्थित एक मकान की स्वामिनी है, जिसका अग्र भाग प्रतिवादी को किराये पर दिया गया है। किराये पर दिए गए भाग को वादपत्र से संलग्न नक़्शे में लाल स्याही से दर्शाया गया है, जो कि वादग्रस्त परिसर है। वादीनी के अनुसार, अभिधारी 450/- रुपये प्रति माह के मासिक किराए पर थी और यह कि प्रतिवादी ने संपत्ति के कुछ अन्य भाग पर अतिक्रमण कर लिया था जो उसे किराये पर नहीं दिया गया था, तथापि, दिनांक 30-12-2002 के नोटिस के बावजूद, प्रतिवादी ने परिसर खाली नहीं किया, जिसके परिणामस्वरूप, उसकी अभिधारी दिनांक 1-2-2003 से समाप्त कर दी गई है, तथापि, अभिधारी द्वारा खाली कब्ज़ा सौंपने में विफलता पर, 100/- रुपये प्रति दिन की दर से हर्जाने के दावे के साथ वाद दायर किया गया है।

5. प्रतिवादी ने अपने लिखित कथन में, वादपत्र के अभिकथनों का खंडन किया है, हालाँकि उसने स्वीकार किया कि वादग्रस्त परिसर उसे लगभग 16 वर्ष पूर्व 150/- रुपये प्रति माह की दर से किराये पर दिया गया था, जिसे बाद में बढ़ाकर 300/- रुपये प्रति माह कर दिया गया था। वादीनी ने वादग्रस्त परिसर का पिछला भाग छोड़ दिया और उसे 150/- रुपये प्रति माह की अतिरिक्त राशि पर उस पर कब्ज़ा करने की अनुमति दी और वह रायपुर चली गई। लिखित कथन में आगे यह कहा गया कि वादीनी के पुत्र सुरेंद्र ने 1994 से जुलाई, 1999 तक किराया प्राप्त किया और तत्पश्चात् उक्त सुरेंद्र ने दिनांक 3-8-1999 को 95,000/- रुपये में पूरी संपत्ति बेचने के लिए एक करार निष्पादित किया और दिनांक 3-8-1999 से दिनांक 7-12-2001 के बीच की अवधि के दौरान 91,200/- रुपये की राशि प्राप्त की। प्रतिवादी का मामला यह है कि अपने और सुरेंद्र के बीच विक्रय करने का करार के निष्पादन के बाद, उसने वादग्रस्त परिसर पर पूर्वेक्षित क्रेता के रूप में कब्ज़ा कर लिया और इस प्रकार अभिधारी स्वतः समाप्त हो गई है। प्रतिवादी ने आगे कहा कि वादीनी द्वारा भेजे गए नोटिस का प्रतिवादी द्वारा उसके अधिवक्ता के माध्यम से विधिवत उत्तर दिया गया था, जिसमें इस तथ्य से इनकार किया गया था कि वह वादीनी का किरायेदार है। प्रतिवादी ने तर्क दिया कि वादीनी न तो कब्ज़ा प्राप्त करने की हकदार है और न ही वह उससे हर्जाना माँगने की हकदार है।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

6. विचारण के अनुक्रम में, वादीनी ने स्वयं को वादी साक्षी-1 के रूप में परीक्षित किया। दूसरी ओर, प्रतिवादी ने स्वयं को प्रतिवादी साक्षी-1 के रूप में परीक्षित किया और उसने एक राजू रघुवानी को प्रतिवादी साक्षी-2, सुरेश कुकरेजा को प्रतिवादी साक्षी-3, सुदेश कुमार खुबवानी

को प्रतिवादी साक्षी-4, सुखराम साहू को प्रतिवादी साक्षी-5 और लक्ष्मीचंद को प्रतिवादी साक्षी-6 के रूप में भी परीक्षित किया।

7. वादीनी ने दिनांक 1-10-1989 के किराया नोट (अभिधारी करार) को प्रदर्श पी-1 के रूप में, दिनांक 30-12-2002 के कानूनी नोटिस को प्रदर्श पी-2 के रूप में और इसकी पावती को प्रदर्श पी-3 के रूप में प्रस्तुत किया और सिद्ध किया है। प्रतिवादी ने प्रदर्श डी-1 पेश किया, जो प्रपत्र डी (आवंटितियों की सूची) में प्रविष्टियों की एक प्रति है, प्रदर्श डी-2 किराए की रसीद के प्रमाण में सुरेंद्र द्वारा हस्ताक्षरित एक डायरी है, प्रदर्श डी-3 उसके भाई सुरेश कुमार खुबवानी द्वारा सहमति पत्र है, प्रदर्श डी-4 सुरेंद्र कुमार राठौर द्वारा प्रतिवादी के पक्ष में निष्पादित दिनांक 3-8-1999 का विक्रय करने का करार है, प्रदर्श डी-5 से प्रदर्श डी-8 सुरेंद्र द्वारा प्राप्त भुगतान की रसीदें हैं, प्रदर्श डी-9 विक्रय-विलेख के निष्पादन के लिए प्रतिवादी के अधिवक्ता द्वारा सुरेंद्र को संबोधित एक नोटिस है, प्रदर्श डी-12 सुरेंद्र कुमार की ओर से भेजे गए दिनांक 26-7-2002 के अधिवक्ता के नोटिस के जवाब में सुरेंद्र के अधिवक्ता को संबोधित है, प्रदर्श डी-15 वादीनी के दिनांक 30-12-2002 के नोटिस का प्रतिवादी के अधिवक्ता द्वारा जवाब है, प्रदर्श डी-18 विनिर्दिष्ट पालन के लिए प्रतिवादी के नोटिस का सुरेंद्र द्वारा जवाब है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

8. विद्वान विचारण न्यायालय ने सिविल वाद क्रमांक 17-ए/2005 में दिनांक 7-1-2006 के अपने निर्णय और डिक्री द्वारा, यह अभिनिर्धारित करते हुए वाद खारिज कर दिया कि सुरेंद्र द्वारा प्रतिवादी के पक्ष में निष्पादित परिसर को विक्रय करने का करार के मद्देनज़र, भू-स्वामी और किरायेदार का संबंध दिनांक 3-8-1999 को और उसके बाद समाप्त हो गया और प्रतिवादी उसके बाद पूर्वेक्षित क्रेता के रूप में कब्ज़े में था। विचारण न्यायालय ने यह भी माना

कि वादीनी वादग्रस्त मकान की स्वामिनी नहीं है। विचारण न्यायालय ने यह भी पाया कि चूँकि सुरेंद्र वादग्रस्त मकान का स्वामी है, इसलिए वादीनी कब्ज़ा प्राप्त नहीं कर सकती है और वह अभिधारी करार के आधार पर प्रतिवादी की बेदखली की मांग नहीं कर सकती है, जिसका प्रभाव दिनांक 3-8-1999 को और उसके बाद समाप्त हो जाता है। जहाँ तक संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 (इसके बाद 'अधिनियम, 1882') की धारा 106 के तहत दिनांक 30-12-2002 के खाली करने के नोटिस (प्रदर्श पी-2) का संबंध है, विचारण न्यायालय ने अपने निर्णय के कंडिका 15 में पाया कि भू-स्वामी और किरायेदार के संबंध की समाप्ति को देखते हुए, उक्त खाली करने का नोटिस अप्रासंगिक है और विवाद के निर्धारण के लिए इसका कोई महत्व नहीं है। अतः, विचारण न्यायालय ने माना कि खाली करने का नोटिस (प्रदर्श पी-2) अभिधारी को अवधारित नहीं करता है।

WebCopy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

9. प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष वादीनी द्वारा दायर की गई अपील में, जिसे स्वीकार कर लिया गया है और सिविल अपील क्रमांक 21-ए/2006 में दिनांक 28-4-2006 के आक्षेपित निर्णय और डिक्री द्वारा वाद डिक्रीत किया गया है, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने कंडिका 7 से कंडिका 16 तक पक्षों के तर्कों पर चर्चा की है और कंडिका 17 में अवधारण के लिए प्रश्न तैयार करने के बाद, अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य पर चर्चा की है और कंडिका 18 से कंडिका 38 तक निष्कर्ष लिखे हैं।

10. स्वीकृत रूप से, वह स्थान जहाँ वादग्रस्त परिसर स्थित है, नगर पालिका की सीमाओं के बाहर है और, इसलिए, छत्तीसगढ़ आवास नियंत्रण अधिनियम, 1961 के प्रावधान अभिधारी के संबंध में लागू नहीं होते हैं और वादीनी द्वारा अधिनियम, 1882 की धारा 106 के तहत दिनांक

30-12-2002 के खाली करने के नोटिस (प्रदर्श पी-2) की तामील करने के बाद वाद दायर किया गया है।

11. अपीलार्थी/प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इस न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया गया है कि विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने विचारण न्यायालय के सुविचारित निर्णय और डिक्री को उलटकर कानून की गंभीर त्रुटि की है और विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों को पलटने का प्रथम अपीलीय न्यायालय का दृष्टिकोण कानून के अनुसार नहीं है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया है कि अपीलार्थी अधिनियम, 1882 की धारा 53ए के तहत कब्ज़े की सुरक्षा के लिए हकदार है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, दिनांक 3-8-1999 के बाद भू-स्वामी और अभिधारी का कोई संबंध नहीं है; इसलिए, विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय वाद डिक्री करने में सही नहीं था। अपने निवेदन को पुष्ट करने के लिए, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा संतोष हजारी बनाम पुरुषोत्तम तिवारी (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधिगण, **2001** ए.आई.आर एस.सी.डब्ल्यू **723** और जगदीश सिंह बनाम माधुरी देवी, **2008** ए.आई.आर एस.सी.डब्ल्यू **3824 = (2008) 10** एस.सी.सी **497** में दिए गए निर्णयों पर अवलंब लिया है।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

12. जहाँ तक अधिनियम, 1882 की धारा 53ए के तहत अपीलार्थी/प्रतिवादी के अपने कब्ज़े की सुरक्षा के अधिकार के संबंध में तर्क है, यह कहना पर्याप्त होगा कि पूर्वेक्षित क्रेता का उक्त अधिकार, यदि उसने विक्रय करने का करार निष्पादित होने की तारीख से पहले की तारीख में एक अभिधारी करार के आधार पर परिसर में प्रवेश किया है, तो इस मुद्दे को माननीय उच्चतम न्यायालय के हाल के निर्णय एफ.जी.पी लिमिटेड बनाम सालेह हूसेनी डॉक्टर और अन्य,

(2009) 10 एस.सी.सी **223** द्वारा अपास्त कर दिया गया है। मैं उक्त निर्णय के कंडिका 23 से कंडिका 30 को लाभप्रद रूप से उद्धृत कर सकता हूँ, जो इस प्रकार हैं:

"**23.** संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53-ए के तहत संविदा के आंशिक पालन पर अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा दिया गया प्रस्तुतीकरण भी स्वीकार नहीं किया जा सकता है। संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53-ए अंग्रेजी कानून में आंशिक पालन के साम्य सिद्धांत पर आधारित है। प्रारंभ में धारा 53-ए को संपत्ति अंतरण अधिनियम में शामिल नहीं किया गया था, लेकिन यह पहली बार संपत्ति अंतरण संशोधन अधिनियम, 1929 (1929 का अधिनियम) द्वारा संशोधन के माध्यम से आया। भारत में विभिन्न न्यायालयों द्वारा उपरोक्त साम्य सिद्धांत के अनुप्रयोग पर न्यायिक राय में कुछ मतभेद के मद्देनज़र संशोधन करना पड़ा था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

24. संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53-ए में कुछ संघटक हैं और, हमारे निर्णय में, वे इस प्रकार हैं:

1) स्थावर संपत्ति के अंतरण का एक संविदा;
2) अंतरण प्रतिफल के लिए होना चाहिए;
3) संविदा लिखित में होना चाहिए;
4) इसे अंतरणकर्ता द्वारा या उसकी ओर से हस्ताक्षरित किया जाना चाहिए;
5) संविदा के निबंधन लेखन से उचित निश्चितता के साथ सुनिश्चित किए जा सकते हों;

6) अन्तरिती ने सम्पत्ति के किसी भाग या सम्पूर्ण का कब्जा ले लेता हो या यदि वह पहले से ही कब्जे में हो, तो कब्जे में बना रहता है;

7) कब्ज़े का ऐसा लेना या कब्ज़े में बने रहना संविदा के आंशिक पालन में होना चाहिए;

8) अंतरिती को संविदा के अग्रसरता में कुछ कार्य करना चाहिए; और

9) उसे संविदा के अपने हिस्से का पालन कर दिया होना चाहिए, या पालन करने को तैयार होना चाहिए।

25. अंग्रेजी कानून में आंशिक पालन के साम्य सिद्धांत का औचित्य इस न्यायालय द्वारा सरदार गोविंदराव महादिक बनाम देवी सहाय, (1982) 1 एस.सी.सी 237 में धारा 53-ए में खोजा गया है। विवरण के कंडिका 13, पृष्ठ 249 में उक्त साम्य सिद्धांत का पता लगाते हुए, जिस तरह से इसे संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53-ए में सम्मिलित किया गया है, विद्वान न्यायाधीशों ने माना कि जिस कार्य या कार्रवाई पर "आंशिक पालन को प्रमाणित करने वाले" के रूप में अवलंब लिया गया है, वह ऐसी प्रकृति और चरित्र का होना चाहिए कि उसका अस्तित्व संविदा और उसके कार्यान्वयन को स्थापित करे। विद्वान न्यायाधीशों ने आगे माना कि महत्वपूर्ण कार्य या कार्रवाई इस तरह की प्रकृति का होना चाहिए कि वह संविदा के पालन में किए गए संविदा के लिए स्पष्ट रूप से संदर्भित हो सके।

26. उक्त निष्कर्ष के समर्थन में, विद्वान न्यायाधीशों ने थाइन (लेडी) बनाम अर्ल ऑफ ग्लेनगाल, 2 एच.एल.सी 131 में दिए गए एक पुराने अंग्रेजी निर्णय का

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

उल्लेख किया। उक्त वाद का संदर्भ देते हुए, विद्वान न्यायाधीशों ने उससे प्राप्त उन उद्धरणों को उद्धृत किया जिन्हें नीचे पुनरुत्पादित किया गया है: (थाइन वाद, एचएल पृष्ठ 158)

> "... कपट विधियों से वाद को बाहर निकालने के लिए आंशिक पालन, हमेशा एक पूर्ण करार को मानता है। जहाँ कोई पूर्ण करार अस्तित्व में नहीं है, वहाँ कोई आंशिक पालन नहीं हो सकता है। यह बाध्यकारी होना चाहिए, और जो किया जाता है वह करार के निबन्धनों के अधीन और करार के बल पर होना चाहिए ...."

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

उपरोक्त सिद्धांत का अवलंब लेते हुए, सरदार गोविंदराव महादिक में विद्वान न्यायाधीशों ने पुनरुक्त किया कि उक्त सिद्धांत का आह्वान करने वाले पक्ष द्वारा जिस कार्य पर अवलंब लिया जाता है, वह ऐसा होना चाहिए कि वह अपने बल पर उसी संविदा के ही अस्तित्व को दर्शाए।

27. उपरोक्त परीक्षणों को, जैसा कि हमें करना चाहिए, वर्तमान स्थिति पर लागू करते हुए हम पाते हैं कि संविदा के आंशिक पालन का कोई वाद नहीं बनता है। यहाँ विनिर्दिष्ट पालन के वाद में दायर वादपत्र में, अपीलार्थी का वाद यह है कि उसे दिनांक 16-7-1981 के अभिधारी करार के अनुसरण में वादग्रस्त परिसर के कब्ज़े में रखा गया था न कि किसी अन्य करार के आधार पर। यदि हम अभिधारी करार

को देखें, तो हम यह नहीं पाएंगे कि अपीलार्थी को उसी के तहत कब्ज़े में रखा गया था। उक्त वाद में अपीलार्थी द्वारा यह दिखाने के लिए कोई साक्ष्य पेश नहीं किया गया है कि वह वादग्रस्त परिसर के कब्ज़े में कैसे आया। वाद का यह पहलू काफी अस्पष्ट है।

28. इसके अलावा, अपीलार्थी के अनुसार, उसने कथित तौर पर वादग्रस्त परिसर के लिए विक्रय प्रतिफल के रूप में 5 लाख रुपये का भुगतान किया। जैसा कि विनिर्दिष्ट पालन वाद के वादपत्र के कंडिका 2 में पहले ही बताया जा चुका है, यह स्पष्ट रूप से अभिकथन किया गया है कि उक्त 5 लाख रुपये की राशि दिनांक 16-7-1981 के अभिधारी करार के निबन्धनों के अनुसार प्रतिभूति निक्षेप के रूप में परिसर के मूल स्वामी के पास निक्षेप के रूप में रखी गई थी। किसी भी स्थिति में, अपीलार्थी को यह दिखाना आवश्यक है कि उसने संविदा के अपने हिस्से का या तो पालन किया है या पालन करने को तैयार है। लेकिन वाद के स्वीकृत तथ्य इसके विपरीत हैं।

29. कथित विक्रय करार दिनांक 20-7-1981 के निष्पादन के बाद, अपीलार्थी पूरी तरह से मौन था और यह केवल उसके 10 वर्षों से अधिक समय बाद, यानी दिनांक 19-8-1991 को, पहली बार, उसने स्वामी से विक्रय पूरी करने के लिए कहा और वह भी स्वामी द्वारा फरवरी 1991 में बेदखली का वाद दायर किए जाने के बाद।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

30. इस प्रकार, इस वाद के तथ्यों और परिस्थितियों में, धारा 53-ए के तहत आंशिक पालन के सिद्धांत का आह्वान नहीं किया जा सकता है। इसलिए, उस आधार पर अपीलार्थी की ओर से दिए गए तर्क में कोई योग्यता नहीं है।"

13. उक्त अनुपात को वर्तमान वाद के तथ्यों पर लागू करते हुए, यह न्यायालय पाता है कि अपीलार्थी/प्रतिवादी ने विनिर्दिष्ट पालन के लिए कोई वाद दायर नहीं किया है। दिनांक 3-8-1999 से दिनांक 6-2-2003 तक, अर्थात् विक्रय करार की तारीख से लेकर वर्तमान वाद दायर करने की तारीख तक, अपीलार्थी/प्रतिवादी ने सुरेंद्र को विक्रय-विलेख निष्पादित करने के लिए मजबूर करने का कोई प्रयास नहीं किया और सुरेंद्र पर नोटिस की तामील के बावजूद, वादीनी द्वारा दिनांक 6-2-2003 को वर्तमान वाद दायर करने से पहले कोई वाद दायर नहीं किया गया। इसके अलावा, यह अपीलार्थी/प्रतिवादी का वाद नहीं है कि उसे दिनांक 3-8-1999 के विक्रय करार के आधार पर वादग्रस्त परिसर के कब्ज़े में लाया गया और सौंपा गया। इसके विपरीत, यह एक स्वीकृत स्थिति है कि वह वादीनी श्रीमती राम प्यारी बाई के साथ दिनांक 1-10-1989 के अभिधारी करार के अनुसरण में वाद संपत्ति के कब्ज़े में आया। यह प्रतिवादी का वाद नहीं है कि अधिनियम, 1882 की धारा 106 के तहत दिनांक 30-12-2002 के खाली करने के नोटिस (प्रदर्श पी-2) में कोई विधिक त्रुटि थी। जब प्रतिवादी अभिधारी की शुरुआत में वादीनी के साथ भू-स्वामी और किरायेदार के संबंध को स्वीकार करता है, तो उसे अभिधारी को चुनौती देने और यह दलील देने से वर्जित किया जाता है कि यह स्वयं और किसी अन्य व्यक्ति के बीच के किसी भी कार्य से समाप्त हो गया है जिसने उसे किराये के परिसर में प्रविष्ट नहीं किया है। यह निष्कर्ष निकालने के लिए अभिलेख पर कोई

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

साक्ष्य नहीं है कि वादीनी ने, किसी भी स्पष्ट कार्य द्वारा, दिनांक 3-8-1999 से अभिधारी को समाप्त कर दिया है। यह तथ्य कि सुरेंद्र संपत्ति का स्वामी है, भी अभिधारी को समाप्त नहीं करेगा, जब भू-स्वामी, जिसने किरायेदार को प्रविष्ट किया है, ने लिखित अभिधारी करार को समाप्त करके अभिधारी को स्पष्ट रूप से समाप्त नहीं किया है।

14. पी. वीरप्पा बनाम एम.ए. मोहम्मद अमानुल्ला, **(1996) 1** एस.सी.सी **415** में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने एक समान विवाद्यक पर विचार किया है, जिसमें बाद का विक्रय करने का करार भू-स्वामी और अभिधारी के बीच था और विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए एक वाद दायर किया गया और समझौता हुआ, तथापि, किरायेदार द्वारा समझौते के निबन्धनों का पालन करने में विफलता पर, भू-स्वामी ने बेदखली के लिए एक वाद दायर किया और किरायेदार की यह दलील थी कि अभिधारी करार विक्रय करने का करार में विलयित हो गया है, माननीय उच्चतम न्यायालय ने माना कि जब एक बार समझौते के शर्तों का पालन नहीं किया गया है, तो अभिधारी के रूप में अभिधारी का पूर्व-विद्यमान अधिकार पुनर्जीवित हो गया और पक्षकार भू-स्वामी और किरायेदार के संबंध से बाध्य थे और भाड़ा नियंत्रक कानून के अनुसार वाद में आगे बढ़ने का हकदार था।

15. वर्तमान वाद में, सबसे पहले विक्रय करने का करार (प्रदर्श डी-4) भू-स्वामी और अभिधारी के बीच नहीं है, इसलिए अभिधारी करार (प्रदर्श पी-1) का बाद के विक्रय करार (प्रदर्श डी-4) में विलय का कोई सवाल ही नहीं है और दूसरे विक्रय करने का करार (प्रदर्श डी-4) में कोई उल्लेख नहीं है कि किरायेदार का कब्ज़ा अब से पूर्वेक्षित क्रेता के रूप में होगा। विक्रय करने का करार (प्रदर्श डी-4) को पढ़ने पर, बल्कि यह प्रतीत होगा कि अभिधारी ने किरायेदार के रूप में

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अपनी स्थिति स्वीकार कर ली है और भले ही अभिधारी के अनुसार, सुरेंद्र किराया प्राप्त कर रहा था, इसमें कोई उल्लेख नहीं है कि किरायेदार विक्रय करने का करार की तारीख से किराया देना बंद कर देगा।

16. इसलिए, यह न्यायालय अपीलार्थी/प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क में कोई सार नहीं पाता है कि अभिधारी दिनांक 3-8-1999 को समाप्त हो गई थी, जब सुरेंद्र और किरायेदार/प्रतिवादी के बीच विक्रय करने का करार (प्रदर्श डी-4) किया गया था।

17. जहाँ तक सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 के तहत प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा अधिकारिता के अनुचित प्रयोग के संबंध में अपीलार्थी/प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता के तर्क का संबंध है, आक्षेपित निर्णय के अवलोकन पर, यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होगा कि विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अभिधारी की समाप्ति और पक्षों के बीच भू-स्वामी और अभिधारी के संबंध की समाप्ति के मुख्य विवाद्यक पर विचार किया है और मौखिक के साथ-साथ दस्तावेज़ी साक्ष्य पर भी विस्तार से विचार किया है और उसके बाद यह निष्कर्ष दर्ज किया है कि अभिधारी बनी हुई है। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अधिनियम, 1882 की धारा 53ए के तहत किरायेदार को सुरक्षा के लाभ की उपलब्धता के संबंध में भी निराकरण किया है और अपने निर्णय के कंडिका 31 से कंडिका 36 में उक्त दलील पर चर्चा करने के बाद, उसने पाया है कि उक्त सुरक्षा अभिधारी के लिए उपलब्ध नहीं है। इस न्यायालय की राय में, विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अभिधारी की निरंतरता और अधिनियम, 1882 की धारा 53ए की प्रयोज्यता के दो सबसे महत्वपूर्ण मुद्दों का निराकरण किया है, इसलिए, प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

पारित आक्षेपित निर्णय और डिक्री सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 के तहत अधिकारिता के प्रयोग की किसी भी त्रुटि से ग्रस्त नहीं है।

18. वर्तमान प्रकरण में, विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने केवल वाद के तथ्यों में लागू होने वाली सही कानूनी स्थिति को लागू किया है और प्रथम अपीलीय न्यायालय का दृष्टिकोण न तो विकृत है और न ही अधिकारिता की किसी त्रुटि से ग्रस्त है। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने, कानूनी सिद्धांतों पर, वादीनी/भू-स्वामी द्वारा दायर अपील को स्वीकार कर लिया है।

19. इस अपील में अवधारण के लिए विधि का कोई सारवान प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है। द्वितीय अपील विफल होती है और इसे सुनवाई प्रारंभ किए जाने के चरण पर ही खारिज किया जाता है।

WebCopy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

हस्ताक्षरित/-

प्रशांत कुमार मिश्रा

न्यायाधीश

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By AMAN DESHMUKH